मॉडल प्रश्नोत्तर

प्रश्न : आंचलिक उपन्यास के तत्त्वों के आलोक में 'मैला आँचल' उपन्यास की विवेचना कीजिए।

उत्तर : रेणुजी का 'मैला आँचल' हिन्दी साहित्य में आँचलिक उपन्यासों की नींव रखता है। यद्यपि आँचलिक उपन्यासों की परंपरा बहुत पहले से चली आ रही है, इसके बावजूद इसे एक अलग और विशिष्ट पहचान देने का श्रेय रेणुजी को ही जाता है।

आँचलिकता से आशय किसी अंचल विशेष की समस्त विशेषताओं से है। आंचलिक रचनाएँ प्रायः अंचल विशेष के रीति-रिवाज, रहन-सहन, वेश-भूषा, सपने एवं अभिलाषाओं का जीवंत दस्तावेज होती है। दूसरे, आँचलिकता एक शिल्प-विधि भी है जो बगैर किसी पूर्वाग्रह के जीवन को देखने और समझने का प्रयास करती है। 'मैला आँचल' भी उसी सहज और सामान्य जीवन का एक 'अलबम' है जिसमें एक अंचल विशेष (पूर्णिया) के तमाम चित्रों को देखा जा सकता है।

आँचलिकता एक ऐसी दृष्टि है जिसमें जीवन ही रचना का कथ्य बन जाता है। इसमें रचनाकार घटनाओं का चुनाव नहीं करता बल्कि जीवन को उसकी संपूर्णता में देखता है। इस आधार पर आँचलिक उपन्यास की कुछ सामान्य विशेषताओं को चिन्हित किया जा सकता है। जैसे-

- आँचलिक उपन्यासों में विशिष्ट क्षेत्र या स्थान ही कथा का आधार।
- क्षेत्र विशेष की भौगोलिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विशेषताओं का यथार्थ चित्रण।
- स्थानीय रंगत वाली लोक-संस्कृति, लोक-जीवन, लोक-पर्व और लोकभाषा का सार्थक प्रयोग।
- एक नायक की प्रधानता नहीं बल्कि समस्त अंचल ही नायक।

रेणु जी के मैला आंचल का मेरीगंज गाँव सामंती व्यवस्था में जकड़ा हुआ, गरीबी और जहालत में सांस लेता हुआ, अंधविश्वासों में दम तोड़ता हुआ अन्य गाँवों की तरह ही सामान्य गाँव है, लेकिन रेणु जी पूर्णिया की बोली-वाणी, वहाँ के रीति-रिवाज, मिथक और लोक संस्कृति का प्रयोग कर इस गाँव को अन्य गाँवों से भिन्न और विशिष्ट बना देते हैं। इसकी आंचलिकता अन्य गाँवों से इसकी भिन्नता में ही निहित है। यहाँ कथा शिक्षा, सभ्यता, संस्कृति के दायरे में नहीं बँधती बल्कि वह विश्वासों, संस्कारों और रीति-रिवाजों को लेकर चलती है।

आँचलिक उपन्यास की एक पहचान उसमें नायकत्व की अनुपस्थिति से भी होती है। यहाँ कोई एक नहीं बल्कि पूरा का पूरा अँचल नायक होता है। नायकत्व की ओर संकेत करते हुए रेणुजी लिखते हैं- ''कथानक है पूर्णिया-------मैंने इसके एक हिस्से के एक ही गांव को पिछड़े गांवों का प्रतीक मानकर उपन्यास-कथा का क्षेत्र बनाया है।'' जाहिर है कि यहां मेरीगंज को कथा के केन्द्र में रखकर रेणुजी पिछड़े गांव, पिछड़े वर्ग और जिन्दगी के दौड़ में पिछड़ गए लोगों को खींचकर सामने लाते हैं।

मैला आँचल पूरी तरह से मेरीगंज तक सीमित है। यह उसकी चारदीवारी को कभी पार नहीं करता और यदि कभी करता भी है तो ठीक उसी तरह जैसे सुबह गाँव से शहर जाने वाला व्यक्ति शाम होते-होते गाँव लौट आता है। यहाँ भी सबकुछ मेरीगंज में ही घटित होता है और सभी पात्र भी यहीं के हैं। मेरीगंज सब पर हावी है और रेणुजी ने किसी भी पात्र को मेरीगंज से बड़ा नही बनने दिया है।

रेणुजी ने मेरीगंज की विशिष्ट पहचान कराने वाले सभी पक्षों को चित्रित किया है। वह इस क्षेत्र के भूगोल, परिवेश, यहाँ के निवासियों और उनके बीच के संबंधों, जातियों के समीकरण तथा राजनीतिक हलचलों आदि सभी का परिचय देते हैं।

आंचलिकता अपनी रूढ़ियों, अंधविश्वासों और मान्यताओं को भी लिए चलती है। रेणुजी ने उपन्यास में इन सब का चित्रण करते हुए यह दिखाया है कि समाज के पुराने जड़ विश्वासों के भीतर ही नई चेतना का उदय भी हो रहा है।

आंचलिकता का सबसे अधिक रंग उभारने वाला उपकरण है भाषा। रेणु खड़ी बोली और मैथिली को मिलाकर अपनी जनपदीय भाषा गढ़ते हैं। रेणु इसे कचराही बोली कहते हैं। यह परिस्थितियों के मिजाज में धुली-मिली एक ऐसी भाषा है जो आंचलिक जीवन का जीवन्त दस्तावेज बन गयी है। मसलन- 'खद्दर पहनता है---जैहिन्न बोलता है----भारथमाथा की जै----गान्ही का यह रास्ता नहीं।' इस भाषा की प्रतिक्रिया में जिस भाषा का प्रयोग हुआ है, वह भी द्रष्टव्य है- 'सचमुच गियानी आदमी है बालदेव जी।' यह भाषा व्याकरण के नियमों से कोसों दूर है और इसीलिए शब्दों को अपने उच्चारण के अनुरूप ढ़ाल लेते हैं, जैसे- 'डागडर बाबू' 'इसपिताल', 'डिस्टीबोड', 'भैंसचरमनबाबू', 'टिशन', 'मुरती' आदि।

समग्रतः 'मैला आँचल' प्रेमचंदोत्तर हिन्दी उपन्यास परम्परा की एक ऐसी महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है जो रचना और जीवन के संबंध को नए ढ़ंग से परिभाषित करता है। यह उपन्यास न केवल आँचलिकता का सूत्रपात करता है बल्कि उसके प्रतिमान भी निर्धारित करता है।

प्रश्न : रेणु जी का उपन्यास 'मैला आँचल' न केवल कथ्य बल्कि अपने शिल्प के कारण भी विशिष्ट है। विचार कीजिए।

उत्तर : 'रेणु' जी का 'मैला आंचल' वस्तु और शिल्प दोनों स्तरों पर सबसे अलग है। इसमें एक नए शिल्प- 'आंचलिकता' के माध्यम से ग्रामीण-जीवन को दिखलाया गया है। इसमें गरीबी, रोग, भुखमरी, जहालत, धर्म की आड़ में हो रहे व्यभिचार, शोषण, बाह्याडंबरों, अंधविश्वासों आदि का सभी का चित्रण है।

मैला आँचल न केवल कथ्य बल्कि शिल्प की दृष्टि से भी एक नवीन प्रयोग है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता है- नायकत्व की अनुपस्थिति। यहाँ कोई एक नहीं बल्कि पूरा का पूरा अँचल नायक होता है। उपन्यास में अंचल के नायकत्व की ओर संकेत करते हुए रेणुजी लिखते हैं- "कथानक है पूर्णिया-------मैंने इसके एक हिस्से के एक ही गांव को पिछडे गांवों का प्रतीक मानकर उपन्यास-कथा का क्षेत्र बनाया है।" जाहिर है कि यहां मेरीगंज को कथा के केन्द्र में रखकर रेणुजी पिछड़े गांव, पिछड़े वर्ग और जिन्दगी के दौड़ में पिछड़ गए लोगों को खींचकर सामने लाते हैं।

रेणु ने मैला आँचल पर परंपरागत शिल्प को छोड़कर एक नए शिल्प का इजाद किया। इस शिल्प में कथा की जगह जीवन ज्यादा महत्वपूर्ण है। यही कारण है कि रेणु को इस आंचलिक उपन्यास की जरूरत पड़ी। मैला आँचल में उपन्यास के सुपरिचित कथा प्रविधि भी देखने को मिलती है। इस प्रविधि में दृश्यात्मक और परिदृश्यात्मक प्रविधियों का प्रयोग होता रहा है। दृश्यात्मक प्रविधि में पाठक खुद अपनी आंखों से कथा दृश्यों को देखता है। परिदृश्यात्मक प्रविधि उसे कहते हैं। जहां कथा कथाकार, नैरेटर, किसी पात्रें की मदद से कहानी को सुनता और समझता है।

रेणु की विशेषता यह है कि उन्होंने इस दोनों विधियों का उपयोग इस कौशल के साथ किया है कि पाठक को यह पता ही नहीं चलता कि कब कथा दृश्यात्मक हो रही है और कब परिदृश्यात्मक। उपन्यास की कथा शुरूआत ही होती है- "गांव में यह खबर तुरंत बिजली की तरह फैल गई- मिलिट्री ने बहरा चेथरू को गिरफ़ कर लिया है और लाल के कुंए से बाल्टी खोलकर ले गए हैं।"

उपरोक्त वाक्य में नाटकीयता की योजना इस कौशल से ही गई है की डिस्ट्रिक बोर्ड के कर्मचारियों के गांव में आने पर सदियों से गरीबाी, अशिक्षा और ब्रिटिश शासन के आतंक में जीने वाले ग्रामीणों की भयातुरता और घबराहट का दृश्य सजीव हो उठा है।

कहीं-कहीं परिदृश्यात्मक प्रविधि का प्रयोग करते हुए रेणु अपने नैरेटर के साथ पात्रों को इस प्रकार मिला देते हैं कि उससे कथा में एक नया स्वाद पैदा हो जाता है। जैसे - "डिस्टिक बोर्ड से मिस्त्री

लोग आए हैं बलदेव के उत्साह का ठिकाना नहीं है। अफसियर बाबू ने तहसीलदार साहब और रामकृपाल सिंह के सामने ही कहा था। आप तो देश के सेवक है---।

शिल्प की दृष्टि से सबसे प्रमुख विशेषता की भाषा है। मिथिलांचल की पृष्ठभूमि पर रचे इस उपन्यास में उस अंचल की भाषा विशेष का अधिक से अधिक प्रयोग किया गया है। यह परिस्थितियों के मिजाज में धुली-मिली एक ऐसी भाषा है जो आंचलिक जीवन का जीवन्त दस्तावेज बन गयी है। मसलन- 'खद्दर पहनता है---जैहिन्न बोलता है----भारथमाथा की जै----गान्ही का यह रास्ता नहीं।' इस भाषा की प्रतिक्रिया में जिस भाषा का प्रयोग हुआ है, वह भी द्रष्टव्य है- 'सचमुच गियानी आदमी है बालदेव जी।'

यहां उपमानों का चुनाव और मुहावरों का प्रयोग भी रेणु उसी परिवेश में रहकर करते हैं। यह भाषा व्याकरण के नियमों से कोसों दूर है और इसीलिए शब्दों को अपने उच्चारण के अनुरूप ढ़ाल लेते हैं, जैसे- 'डागडर बाबू' 'इसपिताल', 'डिस्टीबोड', 'भैंसचरमनबाबू', 'टिशन', 'मुरती' आदि।

मैला आँचल में लोक गीतों की भरमार है और इसमें लगभग 40 छोटे-बड़े गीत हैं। जैसे- खलासी जी सरंगा सदाव्रज का गाना गाते हैं और गाने के क्रम में ही सरंगा सदाव्रज की कथा खलासी जी और फुलिया में तब्दील हो जाती है। सारंगा के रूप में फुलिया कहती है- ''माँ के लिए नाक की बुलाकी ले आना।'' ये लोक गीत जहां कथा को आगे बढ़ाते हैं वहीं मेरीगंज के लोक जीवन को भी उभारते हैं।

उपन्यास के शिल्प में लोकगीत का प्रयोग रेणु की अपनी खोज है और इसमें लगभग 40 छोटे-बड़े गीत हैं। मठ में यदि निर्गुणवाणी की प्रभाती गायी जाती है तो खलासी जी सारंगा-सदाब्रिज की कथा सुनाकर गाँव का मनोरंजन करते हैं और गाड़ी हाँकते हुए गाड़ीवान 'भड़जिया' के गीत गाते हैं। बारिश न होने पर औरतें 'जाट-जाटिन' का खेल खेलती हैं। इस प्रकार, अंचल की पूरी जिन्दगी अभावग्रस्त होने के बावजूद भी गीतों से गूंजती है।

मैला आँचल में फिल्म की तरह घटनाएं एक के बाद एक घटकर विलीन हो जाती हैं और फिर दूसरी प्रारंभ हो जाती हैं। इसमें घटना प्रधानता है किंतु कोई केन्द्रीय चरित्र या कथा नहीं है। इसमें नाटकीयता और किस्सागोई शैली का प्रयोग किया गया है। मैला आँचल वस्तुतः एक ऐसा उपन्यास है जिसके पार्श्व संगीत में मादल और ढ़ोल तथा लोकगीतों के स्वर भी निरंतर सुनाई पड़ते हैं।

इस प्रकार, शिल्प की दृष्टि कसे महाभोज एक नाटकीय आवेश का उपन्यास है। इसका कथानक काफी संक्षिप्त परन्तु समकालीन भारतीय राजनीति के बड़े सच को उजागर करने वाला है।

मैला आँचल न केवल कथ्य बल्कि शिल्प की दृष्टि से भी एक नवीन प्रयोग है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता है कि इसका नायक कोई व्यक्ति (पुरुष या महिला) नहीं है, पूरा का पूरा अंचल ही इसका नायक है। दूसरी प्रमुख बात यह है कि मिथिलांचल की पृष्ठभूमि पर रचे इस उपन्यास में उस अंचल की भाषा विशेष का अधिक से अधिक प्रयोग किया गया है। खूबी यह है कि यह प्रयोग इतना सार्थक है कि वह वहां के लोगों की इच्छा-आकांक्षा, रीति-रिवाज़, पर्व-त्यौहार, सोच-विचार, को पूरी प्रामाणिकता के साथ पाठक के सामने उपस्थित करता है।

रेणु जी ने ही सबसे पहले 'आंचलिक' शब्द का प्रयोग किया था। इसकी भूमिका, 9 अगस्त 1954, को लिखते हुए फणीश्वरनाथ 'रेणु' कहते हैं,

"यह है मैला आंचल, एक आंचलिक उपन्यास।"

इस उपन्यास के केन्द्र में है बिहार का पूर्णिया ज़िला, जो काफ़ी पिछड़ा है। 'रेणु' कहते हैं,

"इसमें फूल भी है, शूल भी, धूल भी है, गुलाब भी, कीचड़ भी है, चंदन भी, सुंदरता भी है, कुरूपता भी - मैं किसी से दामन बचाकर नहीं निकल पाया।"

यही इस उपन्यास का यथार्थ है। यही इसे अन्य आंचलिक उपन्यासों से अलग करता है जो गांव की पृष्ठभूमि को आधार बनाकर लिखे गए हैं। गांव की अच्छाई-बुराई को दिखाता प्रेमचंद, शिवपूजन सहाय, शिवप्रसाद रुद्र, भैरव प्रसाद गुप्त और नागार्जुन के कई उपन्यास हैं जिनमें गांव की संवेदना रची बसी है, लेकिन ये उपन्यास अंचल विशेष की पूरी तस्वीर प्रस्तुत नहीं करते। बल्कि ये उपन्यासकार गांवों में हो रहे बदलाव को चित्रित करते नज़र आते हैं। परन्तु 'रेणु' का 'मेरीगंज' गांव एक जिवंत चित्र की तरह हमारे सामने है जिसमें वहां के लोगों का हंसी-मज़ाक़, प्रेम-घृणा, सौहार्द्र-वैमनस्य, ईर्ष्या-द्वेष, संवेदना-करुणा, संबंध-शोषण, अपने समस्त उतार-चढाव के साथ उकेरा गया है। इसमें जहां एक ओर नैतिकता के प्रति तिरस्कार का भाव है तो वहीं दूसरी ओर नैतिकता के लिए छटपटाहट भी है। परस्पर विरोधी मान्यताओं के बीच कहीं न कहीं जीवन के प्रति गहरी आस्था भी है - "मैला आंचल में"!

पूरे उपन्यास में एक संगीत है, गांव का संगीत, लोक गीत-सा, जिसकी लय जीवन के प्रति आस्था का संचार करती है। एक तरफ़ यह उपन्यास आंचलिकता को जीवंत बनाता है तो दूसरी तरफ़ उस समय का बोध भी दृष्टिगोचर होता है। 'मेरीगंज' में मलेरिया केन्द्र के खुलने से वहां के जीवन में हलचल पैदा होती है। पर इसे खुलवाने में पैंतीस वर्षों की मशक्कत है इसके पीछे, और यह घटना वहां के लोगों का विज्ञान और आधुनिकता को अपनाने के की हक़ीक़त बयान करती है। भूत-प्रेत, टोना-टोटका, झाड़-फूक, में विश्वास करनेवाली अंधविश्वासी परंपरा गनेश की नानी की हत्या में दिखती है। साथ ही जाति-व्यवस्था का कट्टर रूप भी दिखाया गया है। सब डॉ.प्रशान्त की जाति जानने के इच्छुक हैं। हर जातियों का अपना अलग टोला है। दलितों के टोले में सवर्ण विरले ही प्रवेश करते हैं, शायद तभी जब अपना स्वार्थ हो। छूआछूत का महौल है, भंडारे में हर जाति के लोग अलग-अलग पंक्ति में बैठकर भोजन करते हैं। और किसी को इसपर आपत्ति नहीं है।

'रेणु' ने स्वतंत्रता के बाद पैदा हुई राजनीतिक अवसरवादिता, स्वार्थ और क्षुद्रता को भी बड़ी कुशलता से उजगर किया है। गांधीवाद की चादर ओढे हुए भ्रष्ट राजनेताओं का कुकर्म बड़ी सजगता से दिखाया गया है। राजनीति, समाज, धर्म, जाति, सभी तरह की विसंगतियों पर 'रेणु' ने अपने कलम से प्रहार किया है। इस उपन्यास की कथा-वस्तु काफ़ी रोचक है। चरित्रांकन जीवंत। भाषा इसका सशक्त पक्ष है। 'रेणु' जी सरस व सजीव भाषा में परंपरा से प्रचलित लोककथाएं, लोकगीत, लोकसंगीत आदि को शब्दों में बांधकर तत्कालीन सामाजिक-राजनीतिक परिवेश को हमारे सामने सफलतापूर्वक प्रस्तुत करते हैं।

अपने अंचल को केन्द्र में रखकर कथानक को "मैला आंचल" द्वारा प्रस्तुत करने के कारण फणीश्वरनाथ 'रेणु' हिन्दी में आंचलिक उपन्यास की परंपरा के प्रवर्तक के रूप में प्रतिष्ठित हुए। अपने प्रकाशन के 56 साल बाद भी यह उपन्यास हिन्दी में आंचलिक उपन्यास के अप्रतिम उदाहरण के रूप में विराजमान है। यह केवल एक उपन्यास भर नहीं है, यह हिन्दी का व भारतीय उपन्यास साहित्य का एक अत्यंत ही श्रेष्ठ उपन्यास है और इसका दर्ज़ा क्लासिक रचना का है। इसकी यह शक्ति केवल इसकी आंचलिकता के कारण ही नहीं है, वरन् एक ऐतिहासिक दौर के संक्रमण को आंचलिकता के परिवेश में चित्रित करने के कारण भी है। बोली-बानी, गीतों, रीतिरिवाज़ों आदि के सूक्ष्म ब्योरों से है। जहां एक ओर अंचल विशेष की लोकसंस्कृति की सांस्कृतिक व्याख्या की है वहीं दूसरी ओर बदलते हुए यथार्थ के परिप्रेक्ष्य में लोक-व्यवहार के विविध रूपों का वर्णन भी किया है। इन वर्णनों के माध्यम से 'रेणु' ने "मैला आंचल" में इस अंचल का इतना गहरा और व्यापक चित्र खींचा है कि सचमुच यह उपन्यास हिन्दी में आंचलिक औपन्यासिक परंपरा की सर्वश्रेष्ठ कृति बन गया है।

अंचल विशेष का गुण धर्म आंचलिकता है। आंचलिक रचनाएँ अंचल विशेष के रीतिरिवाज, रहन-सहन वेश-भुशा, सपने एवं अभिलाषाओं का जीवन्त दस्तावेज होती है लेकिन इससे यह ध्वनि नहीं निकलती की अंचल के सभी प्राणियों का जीवन एक रस एक रूप होता है। यहाँ भी एक की अभिलाषाएँ दूसरे की अभिलाषाओं से टकराती है। एक का प्रेम दूसरे की घृणा का विषय बनता है। इंसानियत, हैवानियत, दया, प्रेम घृणा को लेकर यहाँ भी घात-प्रतिघात चलता रहता है। स्थानीय रंगत, रीति-रिवाज, रहन-सहन को किसी रचना पर आच्छादित कर देने मात्र से आंचलिक उपन्यास पुरा नहीं हो जाता। आंचलिकता सिर्फ वाहय रंगों में नहीं है और न हीं अंचल विशेष की चौहदी के सर्वेक्षण में, आंचलिकता अंचल विशेष के चिरत्रों के यथार्थ अंकन में है।

आंचलिकता राष्ट्रीयता का विलोम नहीं है। अंचल राष्ट्र से निर्पेक्ष नहीं होता। अंचल या जनपद भी राष्ट्र का ही अंग होता है। जिस तरह अंचल का नाम लेने से राष्ट्र खंडित नहीं होता उसी तरह आंचलिकता से राष्ट्रीयता के टुकड़े नहीं होते।

रेणु जी शुष्क जीवन में भी रस तलाशने वाले, लोक संस्कृति के महागायक हैं। उनका कथाकार व्यक्तित्व लोक कला, लोक कथा लोक संस्कृति और लोक गीतों के तत्वों से बुना हुआ है। लोक जीवन के स्वभाव और संस्कार से वे परिचित हैं। वे स्थानीय लोक जीवन में ही डुबकर अपने चरित्रों को गढ़ते चलते हैं। लोक जीवन से जुड़ाव और अपने क्षेत्र से गहरी आत्मीयता हीं उनकी ताकत है। इसी आधार पर वे आंचलिक जीवन और समस्याओं का साक्षात्कार करते हैं। अपनी लोक कथा और लोक चेतना के बल पर हीं वे ढ़ाई-तीन वर्षों के काल को उपन्यास में जिस तरह बांधा है वह शताब्दियों को अपने कथा फलक पर उतारने वाले रचनाकारों के लिए ईर्ष्या का विषय है।

आंचलिकता सामान्यता में नहीं विशिष्टता में है। जो सामान्य, टाइप से भिन्न है वही विशिष्ट है। रेणु जी के मैला आंचल का मेरीगंज गाँव सामंती व्यवस्था में जकड़ा हुआ, गरीबी और जहालत में सांस लेता हुआ, अंधविश्वासों में दम तोड़ता हुआ सामान्य गाँव हीं है अन्य गाँवों की तरह , लेकिन रेणु जी पुर्णिया की बोली-वाणी, वहाँ के रीति-रिवाज, मिथक और लोक संस्कृति का प्रयोग कर

इस गाँव को अन्य गाँवों से भिन्न और विशिष्ट बना देते हैं। इसकी आंचलिकता अन्य गाँवों से इसकी भिन्नता में ही निहित है। दूसरी बात यह कि रेणु जी ने हिन्दी उपन्यास को परम्परागत नायक से मुक्ति दिलायी। आंचलिक उपन्यास में व्यक्ति नायक नहीं होता, पूरा अंचल हीं नायक होता है। मैला आंचल में भी मेरीगंज हीं अपनी विशेषताओं के साथ नायक है। रेणु ने इसकी भूमिका में लिखा, ‘‘कथानक है पूर्णिया .... मैंने इसके एक हिस्से के एक ही गाँव को पीछड़े गाँव का प्रतीक बनाकर इस उपन्यास कथा का क्षेत्र बनाया है।’’ रेणु जी इस अंचल के सरल जटिल संश्लिष्ट जीवन का अनेकानेक चित्र देकर पीछड़े गाँव, पीछड़े वर्ग और जिंदगी की दौर में पिछड़ गए लोगों को कथा के केन्द्र में ले आते हैं। उन्होंने अंचल से जुड़े हुए जीवन को इस तरह चित्रांकित किया है कि पूरा अंचल मोहक कलाकृतियों से अटा एक बड़ा कैनवास दिखाई पड़ने लगता है। इस कैनवास पर उभरे चित्र हृदयग्राही भी हैं और हृदयविदारक भी।

आंचलिक उपन्यास आंदोलन की शुरूआत मैला आंचल से होती है। लेकिन यही उपन्यास उस आंदोलन- की चरम उपलब्धि भी है। यह आंचलिक आंदोलन गाँवों के उपेक्षित सामुहिक जीवन को साहित्यिक चिंता के केन्द्र में लाने के कारण क्रान्तिकारी आंदोलन था। रघुवीर सहाय हिन्दी के आंचलिक आंदोलन से पैदा हुयी आंचलिक रचनाओं की लोकप्रियता की तुलना रूसी साहित्य की पोवेस्त्र (उपन्यास) की प्रसिद्धि से करते हैं। उन्होंने बताया की दोनों आंदोलन गाँव जाकर मानवीय अनुभव न्याय और नैतिकता की खोज करते हैं। उनके अनुसार यह आंदोलन भद्र लोग (अभिजात्य वर्ग) के राजनीतिक चरित्र के विरूद्ध प्रतिक्रिया रूप में जनमानस में उपजी वितृष्णा की अभिव्यक्ति था। रूस में सन् 60 के आसपास सामुहिक खेती के बाद वाले दौर में आंचलिक आंदोलन का उदय हुआ। रूसी हिन्दी आंचलिक उपन्यासों में समान बात यह है कि दोनों सामाजिक राजनीतिक हृदयहीनता के विरूद्ध घृणा व्यक्त करते हैं। दोनों ने नयी नैतिकता की उम्मीद जगायी। रघुवीर सहाय ने रेणु के मैला आंचल और परती परीकथा की तुलना वलेनतीन रसपुतीन के उपन्यास ‘मयोरा से विदायी और अंतिमघड़ी’ से करते हुए कहाः ‘‘कि दोनों लेखक परिवार और समाज के प्रति कर्मठ लगाव और निष्ठा दिखाते हैं। दोनों गाँव की ओर विश्राम या मनोरंजन के लिए नहीं जाते, लोकतंत्र के जड़ों की खोज में जाते हैं। दोनों में आंचलिक होना ग्रामीण होकर रह जाना नहीं है, अधिक सार्थक जीवन जीना है। दोनों स्थानीय बोली का रचनात्मक प्रयोग करते हैं।’

मैला आंचल में स्थानीय रंगत का ऐसा उभार और ग्रामीण चरित्रों का ऐसा कलात्मक रचाव है कि उसके सामने नगर और नागरीय जीवन फीके लगते है। यहाँ आंचलिकता शहरी चाक-चिक्य का विलोम है। शहरी आकर्षण को तोड़ने के लिए इसे आंचलिकता का प्रयोग किया गया। साहित्य में इसका मोह शहर एवं गाँव की गैर बराबरी से पैदा हुए वैसम्य बोध की उपज है। डा0

नित्यानन्द तिवारी आंचलिकता को स्वाधीनता आंदोलन की देन मानते हैं। वे कहते हैं कि 'मैला आंचल की आंचलिकता स्वाधीनता आंदोलन की संतान है। स्वाधीनता आंदोलन मुख्य रूप से राजनीतिक होते हुए भी सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, साहित्यिक - सभी क्षेत्रों में अलग-अलग तरह के लोगों द्वारा अपनी-अपनी तरह लड़ा जा रहा था। मेरीगंज के लोग भी पूरी लड़ाई लड़ रहे हैं - सभी क्षेत्र में अपनी तरह से। आंचलिकता नयी सामाजिक राजनीतिक चेतना की एक उर्वर भूमि के रुप में है। रेणु ने उपन्यास में मध्युगीन धार्मिक अंधविश्वासों को विस्तार से दिखाने के बाद भी यह दिखाना नहीं छोड़ा कि अब अंधविश्वासों की काई सुखकर पपड़ी हो रही है। नयी चेतना के उदय को उन्होंने पहचाना। यह बताया कि वास्तविक जीवन की ऊष्मा दलगत ऊष्मा से कहीं ज्यादा है। तभी तो गाँव में अनेक पार्टियाँ सक्रिय हैं, फिर भी लोगों के मानवीय संबंध दलगत राजनीति से प्रभावित नहीं होते। बावन दास, बालदेव आदि रक्त मांस के जीते जागते चरित्र हैं, इन्हें किसी खास मतवाद का प्रतीक समझने की भूल नहीं की जा सकती।

मैला आंचल की आंचलिक विशिष्टिता उसमें प्रयुक्त किंवदंतियों के भी कारण हैं। ततमा टोली के नन्दलाल के मौत से जुड़ी हुयी किंवदंती औपन्यासिक युग की दहसत में ले जाती है। यह दहशत मन के भीतर उतर कर मन को किसी संभावित अनिष्ट की आशंका से त्रस्त कर देती है। नन्दलाल मार्टिन के बंगले के खंडहर से ईंट चुराने जाता है।" जंगल से एक प्रेतनी निकली और नन्द लाल को कोड़े से पीटने लगी - साँप के कोड़े से। नन्दलाल वहीं ढ़ेर हो गया। बगुले की तरह उजली प्रेतनी" यह दृष्य हमें नीलयुग़ीन त्रासदी की याद दिलाता है। मन से युग की दहसत को उतरने में अभी समय लगेगा। नन्दलाल मरता तो है सर्प दंश से लेकिन उजली प्रेतनी और साँप के कोड़े का प्रयोग कर लेखक इस घटना को मिथकीय रूप दे देता है। मेम के नाम पर रखे गए गाँव का पुराना नाम लेने पर मार्टिन साहब सौ कोड़े की सजा देता था। कोड़े की मार सर्प दंश से कम भयावह नहीं होगी। निर्दोषों को सताने वाले मार्टिन का हश्र भी बहुत बुरा हुआ। उसकी मेम मेरी मलेरिया से पीड़ित हो उसकी अनुपस्थिति में ट्युबवेल के पास वाले गड्ढ़े में अपने घुंघराले रेशमी बालों पर कीचड़ थोपते-थोपते मरी। उसके वियोग में मार्टिन भी पागल हो गया। उसकी मौत पागलखाने में हुयी। रेणु जी निर्दोषों को सताने वाले मार्टिन का यह हश्र सिर्फ सताए हुए दिलों को सांत्वना देने के लिए चित्रित नहीं करते बल्कि पाप के बूरे फल को विश्वास करते हैं। निर्दोषों को सताना यदि बूरा है तो व्यभिचार भी बूरा हीं है। लक्ष्मी दासिन के साथ व्यभिचार करने वाले महंत सेवादास अंधा हो जाता है और महंत रामदास को मिर्गी आने लगती है।

ग्रामीण संस्कृति के नियामक तत्वों में एक है तथ्यों का फैंटेसीकरण। रेणु जी गाँव में प्रचलित वर्जनाओं निषिधियों (टोटेम) के बीच से फैंटेसी की पहचान करते चलते हैं। मैला आंचल में

सतयुगी धारणा का मिथक और कुछ नहीं नैतिकता को बनाये रखने वाली फैंटेसी है। समाज में प्रचलित वर्जनाएँ नैतिकता को सुरक्षित ही नहीं रखती निर्मित भी करती हैं। पहले के लोग पूरे विश्वास के साथ यज्ञादि में नदी को आमंत्रित करते थें। नदी उन्हें भोज के लिए चांदी की बरतन देती थी। उपयोग के बाद बर्तन नहीं लौटाने पर बिगड़े नियत वाले पर नदी का न्याय क्रोध बनकर बरसता था। रेणु लिखते हैं 'बिगड़े नियत वाले का तो बेटा ही खत्म हो गया। पाप का बुरा फल।' बिगड़ी नियत के लिए टोले में बंटे हुए गाँव के लोग बिगड़ी नियत का लांक्षण एक दूसरे टोले पर लगाते हैं। इसका अर्थ है कि यह वास्तविक घटना नहीं है फैंटेसी है। अंधविश्वासों को सभ्य मानने के पीछे लोगों की मिथक प्रियता ही काम करती है। तहसीलदार साहब के लगुए भगुए प्रचारित करते हैं कि तीन-तीन बार कमली की शादी ठीक हुयी और कट गयी। कमली कमला मइयाँ का ही वरदान मानी जाती है। लगुए, भगुए प्रचारित करते हैं कि कमला मइया नहीं चाहती की कमली का विवाह हो जबकि हकीकत है कि तहसीलदार साहब धन लोभ के कारण यह समझते हैं कि कमली के जाते हीं उनका धन भी चला जाएगा, इसलिए वे जानबुझकर कमली का विवाह नहीं करते हैं। ग्रामीण जनता तिल सी वास्तविकता को भी मिथक के पहाड़ में तबदील कर देते हैं।

रेणु ने अंधविश्वासों का सकारात्मक और नकरात्मक दोनों तरह का उपयोग किया है। सकारात्मक उपयोग के जरिए सामाजिक नैतिकता के प्रति लोगों की आस्था दृढ़ करते हैं तो नकारात्मक उपयोग के जरिए मानवता विरोधी शक्तियों को बेपर्दा करते हैं। गाँव में विधवा असहाय स्त्रियाँ डाइन घोषित कर पीड़ित की जाती हैं। पार्वती की माँ का सुन्दर आकर्षक व्यक्तित्व भी लोगों की शंका का विषय बन जाता है। उसके सम्बन्ध में गाँव में यह विश्वास है कि वह बच्चों को मारकर खा जाती है। कभी-कभी लोग पारस्परिक राग द्वेष बस इन अंधविश्वासों का उपयोग अपने पक्ष में करते हैं। जोतखी जी होलिया टोली के धीरू को बताते हैं कि तुम्हारे बेटे को पार्वती की माँ ने ही मारा है। तुम्हारा बेटा निश्चित समय में एक निष्चित योजना के तहत् मिल सकता है। इस योजना के दुर्योग से पार्वती की माँ की हत्या हो जाती है। ओझाई की दृष्टि से खलासी जी का व्यक्तित्व बड़ा दिलचस्प है। भूत-प्रेत, जादू-टोना, लोकगीत जड़ीबुटी आदि के वे विशेषज्ञ हैं। अवसर के अनुरूप उन्हें हर महारथ वाली विद्या आती है। वे भूतों की नई किस्म -वन भूतवा की जानकारी देते हैं। यह उस बानर का भूत है जो डा0 प्रशांत के प्रयोगों के कारण मारा गया। अंधविश्वासों की चर्चा करते हुए रेणु यह बताना नहीं भूलते कि गाँव के लोग (इसलिए) अपने भोले भालेपन के कारण ही अंधविश्वासी नहीं हैं बल्कि सच से अवगत होते हुए भी यदि अंधविश्वासों में आस्था दिखाते हैं तो इसलिए कि उनकी भलाई इसी में है। मतलब यह कि वे सबकुछ जानकर भी भोले बने रहते हैं।

लोक गीत रेणु की आंचलिकता के असाधारण आयाम है। ये कथा और चरित्र में स्थानीय रंगत भरते हैं। उनके श्रोत और उद्देष्य को लेकर कुछ दिलचस्प सवाल खड़े होते हैं। रेणु के द्वारा प्रयुक्त लोकगीत प्रायः मिथला के लोगों की मौखिक बाचिक परम्परा के अंग हैं। वे एक मुँह से दूसरे

मुँह तक जमाने से चले आ रहे हैं। रेणु ने मैला आंचल में राजनैतिक सामाजिक संर्दभ में विद्‌यापति और कबीर के लोग प्रचलित गीतों, लोक गीतों और फिल्मी गीतों उपयोग किया है। सिर्फ मैला अंचल में ही 20 मैथली गीत रखे गये हैं। जैसे सोहर (जन्मगीत), नचाई (विवाह गीत), समदाऊन (मृत्यु गीत), कजरी (वर्षा गीत) बरगमनी आदि। उन्होंने होली गीत और जोगीरा का प्रयोग विशेष प्रयोजन से किया है। होली सामाजिक भेद मिटाने वाला पर्व है। उसमें बड़े छोटे का भेद कुछ दिनों के लिए मिट जाता है। लोग निर्भय होकर एक दूसरे से हास्य विनोद का मजा लेते हैं। होली में रंग, अबीर कीचड़, गोबर, पानी सबका प्रयोग करते हैं। होली के गीतों का क्रम देखते हुए यह लगता है कि रेणु ने वियोग से संयोग की दिशा चुनी है। दुखात्मक वियोग के बाद ही संयोगात्मक सुख के दिन आते है। होली का पहला गीत विरहनी के शास्त्रीय मुद्रा के साथ शुरू होता है। ‘अब न जियब रे सईया’ और यह खत्म होता है संयोग और उल्लास से ‘ऐसे नचाए होली रे’।

आंचलिकता का सबसे अधिक रंग उभारने वाला उपकरण है भाषा। रेणु खड़ी बोली और मैथली को मिलाकर अपनी जनपदीय भाषा गठते हैं। यह भाषा खड़ी बोली के व्यवहारिक ढांचे में मैथली के व्याघात से तैयार हुयी है। रेणु इसे कचराही बोली कहते हैं। बालदेव के भाषण से इसका नमुना उद्‌धृत हैः पियारे भाईयों। कोठारिन साहेब जितना बोली सब ठीक है लेकिन सबसे बड़ा दोखी हम है .... हम कोई विदमान नहीं हैं शास्त्र पुरान नहीं पढ़े हैं, गरीब आदमी है मुरख है मगर महात्मा जी के परताप से भारत माता के परताप से मन में सो भाव जन्म हुआ और हम सेवक का बाना ले लिया। रेणु की भाषा संगीतात्मक संकेतों व्यंजनाओं से भरी हुयी है। उसमें ध्वनि बिम्बों का बड़ा सधा हुआ प्रयोग किया गया है : गड़ गड़ाय .... गड़ गड़ .... बादल घुमड़ा .... विचली चमकी और हरहरा, कर वर्षा होने लगी। घहर घहर छररर ..... छरर।

मैला आँचल फणीश्वरनाथ 'रेणु' का प्रतिनिधि उपन्यास है। आंचलिक उपन्यास की स्वस्थ्य एवं समृद्‌ध परंपरा मैला आँचल से हीं शुरू हुयी। नेपाल की सीमा से सटे उत्तर-पूर्वी बिहार के एक पिछड़े ग्रामीण अंचल को पृष्ठभूमि बनाकर रेणु ने इसमें वहाँ के जीवन का, जिससे वह स्वयं ही घनिष्ट रूप से जुड़े हुए थे, अत्यन्त जीवन्त और मुखर चित्रण किया है। इसमें ग्रामीण जीवन के सभी पहलूओं का सीधा साक्षात्कार है। सन् 1954 में प्रकाशित इस उपन्यास की कथावस्तु बिहार राज्य के पूर्णिया जिले के मेरीगंज की ग्रामीण जिंदगी से संबद्‌ध है। यह स्वतंत्र होते और उसके तुरंत बाद के भारत के राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक परिदृश्य का ग्रामीण संस्करण है। इस उपन्यास में प्रामाणिक जिंदगियों से जुड़े हुए सिर्फ दृष्य नहीं उभरते, दृष्टि भी उभरती है। इस उपन्यास में एक साथ व्यक्ति और समाज, व्यक्ति और दल, अंचल और राष्ट्र, आंचलिकता और सार्वभौमिकता के द्‌वन्द्‌वात्मक संबंध उभरते हैं। संबंधों की तासीर कहीं मधुर भी है और कहीं तल्ख भी। वास्तविकता की एक पैनी लकीर हमें दृष्टि सम्पन्न यथार्थ तक ले जाती है। इसमें गरीबी, रोग, भुखमरी, जहालत, धर्म की आड़ में हो रहे व्यभिचार, शोषण, बाह्‌याडंबरों, अंधविश्वासों आदि का चित्रण है। नलिन विलोचन शर्मा जी ने बहुत

पहले मैला आँचल की समीक्षा करते हुए कहा कि मैला आंचल व्यक्ति और समूह का एक द्वन्द्वात्मक आख्यान है। डा0 देवराज कहते हैं कि “ मैला आँचल के थीम की व्यापकत्व को देखते हुए यह कहना कठिन है कि यह राष्ट्रीय है, आंचलिक है या सार्वभौमिक। ‘ मैला आँचल’ सिर्फ जनपदीय जीवन और समस्याओं को ही चित्रित नहीं करता इसमें राष्ट्रीय सामाजिक समस्याएँ भी प्रतिबिम्बित होती हैं।

मैला आँचल में लेखक आजादी पूर्व की यातना, त्रासदी एवं आशामुलक उत्साह का चित्रण करते हुए आजादी बाद की गाँधी की हत्या, बावनदास की हत्या, अत्याचारियों, भ्रष्टाचारियों के साथ कांग्रेस के गठजोड़, किसानी उत्पीड़न, तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद के हृदय परिवर्तन आदि ब्यौरों को समेटता हुआ उपन्यास का अन्त करता है। रचनाकार आजाद भारत की नयी राजनीतिक व्यवस्थाओं से संतुष्ट नहीं है। वह यह महसूस करता है कि जो राष्ट्रवादी शक्तियाँ आजादी पहले शोषण मूलक उपनिवेशवादी शक्तियों से लड़ रही थी। वहीं आजादी बाद जनसेवा के उच्चतम आदर्शों को भूल कर लाभ और लोभ केन्द्रित होती चली गयीं। आजादी आदर्श विनाशक साबित होगी यह बावन दास जैसे लोगों ने नहीं सोंचा था। आजादी बाद कुछ भी तो नहीं बदला - वही किसानी उत्पीड़न, वही धोखाधड़ी, कानून के सिद्धान्त और व्यवहार में वहीं अन्तर। बावनदास कहता है ‘भारत माता अब भी जार-बेजार रो रही है।’ यह कथन बावनदास का मोह भंग है आजाद भारत से। क्यों ने हो? हमारी स्वतंत्र भारतीय राजनीतिक व्यवस्था उस छली उपनिवेशवादी व्यवस्था का भारतीयकरण हीं तो थी। वह मच्छरों और खटमलों की व्यवस्था बन गयी। कालीचरण कहता है कि “ये पूंजीपति और जमींदार खटमलों और मच्छरों की तर सोसख हैं। .... खटमल! इसलिए बहुत से माड़वारियों के नाम के साथ मल लगा हुआ है और जमिंदारों के बच्चे मिस्टर कहलाते हैं। मिस्टर ...... मच्छर।” यदि खटमल खून चूसने वाले पूंजीपतियों और व्यापारियों के प्रतीक हैं तो मच्छर प्रतीक है शिक्षित उच्च मध्यवर्गीय शोषकों का।

मैला आँचल में मेरी गंज महज एक गाँव नहीं है, वह राष्ट्रीय राजनीति की प्रयोगशाला है। रेणु जी मैला आंचल में सभी पार्टियों को आजमाकर बावन दास के शब्दों में कहते हैं ‘सब पार्टी समान’। जब राजनीति में पतन का सिलसिला शुरू हो जाता है तब पार्टी, संविधान और उनके राजनीतिक मूल्यों का कोई मतलब नहीं रह जाता है। भ्रष्टाचार राजनीतिज्ञों के जीवन जीने का ढंग बन जाता है तथा राष्ट्रीय, सामाजिक, मानवीय मूल्यों को बलि दे दी जाती है। आंचलिक स्तर पर बावन दास की बलि और राष्ट्रीय स्तर पर महात्मा गाँधी की बलि मूल्यों की ही बलि है। मूल्यों के

कारण ही कालीचरण की दुर्गति हुयी। डकैती का आरोपी कालीचरण अपने को निर्दोष साबित करने के लिए जेल से भागता है। पार्टी उसकी एक नहीं सुनती, वह डाकू घोषित कर दिया जाता है। वह अंततः कर्मकार के यहाँ आश्रय लेता है। उपन्यास में लेखक ने संकेत दिया है कि जनता बावनदास या कालीचरण की समाज सेवा को सम्मान देती है। लेकिन उनके सेवा मूल्यों को सामाजिक जीवन प्रवाह का हिस्सा नहीं बनाती।

उपन्यास में अंचल और उसके जीवन के जीवन्त दृश्य ही नहीं है उनके पीछे जीवन्त दृष्टि भी झांकती है। यह जीवनत दृष्टि मानवतावादी जीवन्त दृष्टि है निम्न उद्धरणों से इसका संकेत मिलता है।

"डाक्टर का रिसर्च पूरा हो गया, एकदम कम्पलिट वह बड़ा डाक्टर बन गया। डाक्टर ने रोग की जड़ पकड़ ली है।"

"गरीबी और जहालत (मूर्खता) इस रोग के दो कीटाणु हैं"

"दरार पड़ी दीवार यह गिरेगी"

"डाक्टर प्रशान्त का रिसर्च पुरा नहीं हुआ लेकिन उसने वह जमीन तलाश ली है जिसपर सामाजिक परिवर्तन का लक्ष्य लेकर सामाजिक दर्शन की नींव रखी जा सकती है। विचार धारा अपने विषय से आशक्ति की मांग करती है। डा0 प्रशान्त की आशक्ति बनी है मेरी गंज की जमीन से । उसने समझ लिया है कि गरीबी और जहालत के कीटाणु लोगों के खुन में प्रवेश कर गये हैं। उसकी इसी समझ को डाक्टर ममता श्रीवास्तव समाशोध की संज्ञा देती है। वह कहती हैं कि उसका रिसर्च असफल नहीं हुआ है। मिट्टी और मनुष्य से इतनी गहरी मुहबत किसी लेबोरेट्री में नहीं बनती। डा0 प्रशान्त वैज्ञानिक है लेकिन उसमें वैज्ञानिक की टतस्थता नहीं है। वह गरीब और गरीबी से असंवेदित होकर नहीं रह सकता। वह कहता है 'ममता! मैं फिर काम शुरू करूँगा, यहीं इसी गांव में। मैं प्यार की खेती करना चाहता हूँ, आँसू से भिंगी हुयी धरती पर प्यार के पौधे लहलहायेंगे मैं साधना करूंगा, ग्रमवासिनी भारतमाता के मैला आँचल तले।' यहाँ निम्नवर्गीय समाज से उच्च मध्यवर्गीय व्यक्ति के नये

सम्बन्ध का बोध होता है। इससे ग्रामीण संरचना के तमाम आर्थिक सामाजिक राजनैतिक सरोकार ध्वनित होने लगते हैं। हमारे समाज में वर्गों के बीच की खाई शेर की आँख की तरह एक घूरती हुयी सच्चाई है। इस खाई को सपनों की बिम्ब मालाओं के सहारे ढंक कर समानता की बात करना, नीरिह जनता के साथ छल है। आर्थिक सामाजिक, राजनीतिक समाज के लिए किए जाने वाले संघर्ष से हीं इस खाई को खत्म किया जा सकता है। डा0 प्रशान्त की यह अन्तर्दृष्टि समय की वास्तविकताओं के भीतर से फुटती है। यह किताबी नहीं है बल्कि समाज के द्वन्द्वों और तनावों के भीतर से निकली है। इसलिए मैला आँचल की कोई भी घटना राष्ट्रीय सामाजिक घटना से अलग नहीं की जा सकती है।

इस उपन्यास में रेणु जी उस समय की तमाम राजनैतिक विचारधारा को उसी शक्ति और सीमा के साथ पकड़ा है। उस समय के तीन महत्वपूर्ण मतवाद से जनता प्रभावित थी। समाज के सबसे बड़े व्यापक तपके पर गाँधीवाद का असर था। दूसरा मतवाद है साम्यवाद और तीसरा है राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा प्रायोजित हिन्दु सम्प्रदायवाद। काली टोपी वाला स्वयंसेवक इसका प्रतिनिधित्व करता है। साम्यवाद की ओर अपने अपने दृष्टिकोण के साथ कालीचरण, डाक्टर प्रशान्त और चलित्तर कर्मकार है। चलित्तर कर्मकार का रास्ता बम-बंदूकों का रास्ता है। कालीचरण भी उग्र है लेकिन वह शुरू में हिंसा को लात और थप्पर तक हीं रोके रखता है। वह भी एक विद्रोही युवक है। जमीन की बंदोबस्ती के समय में वह गाँव में नेता बनकर उभरता है। जमीन की लड़ाई के क्रम में गाँव के जातिवादी समुह, वर्गवादी समुह में बदलने लगते हैं। बदलाव के क्रम में लोग कुछ नये से जुड़ते हैं तो कुछ पुराने से अलग भी होते हैं। इससे पुरानी सामाजिक संरचना के विन्यास अचानक छिन्न भिन्न हो जाते हैं। व्यक्तिक हित प्रमुख हो जाता है। राजनैतिक संघर्ष के क्रम में ही कालीचरण और प्रशांत की अपनी राजनैतिक समझ तैयार होती है। सामुहिक जीवन में भागीदारी पुनः एक नया संदेश देती है। कालीचरण और डाक्टर प्रशांत के अन्र्तजीवन और वर्हिजीवन में एक संबंध है विच्छेद नहीं। उनकी व्यक्तिकता और सामाजिकता भी एक दूसरे से स्वतत्र नहीं है। डाॅक्टर प्रशांत के साम्यवाद की ओर झुकने, अपने साथियों के साथ कालीचरण के शोषण के खिलाफ उठ जाने तथा अन्याय के विरूद्ध चरित्तर कर्मकार की हिंसा मूलक राजनीति देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि नयी रचनात्मक शक्तियाँ निर्मित हो रही हैं। उपन्यास में बावन दास की हत्या और बालदेव के अध्यःपतन को देखकर यह नहीं मान लेना चाहिए कि ग्रामीण प्रगति ह्रासोन्मुख है। यदि पुरानी शक्तियों खण्डित और क्षतिग्रस्त हुयी है तो नयी परिवर्तनवादी शक्तियों का उदय भी हुआ है।

डा0 कमला प्रसाद रेणु की जीवन दृष्टि को गाँधीवादी मानते हैं। ऐसा मान लेने पर और न्यासिक अन्र्तदृष्टि अस्पष्ट ही रह जाती है। रेणु जी के इस उपन्यास में गाँधीवाद की सैद्धान्तिक और व्यवहारिक दोनों रूपों को उजागर करने के लिए बाबन दास और बालदेव जैसे चरित्रों का गढ़ा है।

इस उपन्यास में बालदेव रेणु का वैसा ही प्रवक्ता नहीं है जिस तरह जीवन में देवीदीन प्रेमचंद का प्रवक्ता बनकर आता है। गाँधीवाद के अधकचड़ेपन और ढ़ोगी रूप के जरिए उन्होंने बालदेव का चरित्र निर्मित किया है। इसलिए उन्हें जहाँ भी अवसर मिलता है वे बालदेव में मौज़ूद गाँधीवाद के रूढ़िबद्ध रूप की खिल्ली उड़ाने से नहीं चुकते। गाँधीवादी निग्रह धर्म का सहारा लेकर किस तरह भ्रष्ट और पतीत रूप अख्तियार कर रहा था इसका उदाहरण्ण है लक्ष्मी वासिन के साथ बालदेव का संबंध। मेरीगंज की जनता ऐसे ही बालदेव के अनषन को अंट-संट नहीं कहती।

बवनदास में गाँधीवाद की सैद्धान्तिक रूप प्रकट होता है। वह गाँधीवाद के भोले निर्दोश रूप को प्रटिकीत करता है। बावनदास सत्य के साथ उसी तरह निरन्तर प्रयोग करता रहा जिस तरह गाँधी जी सत्य के लिए जीवन भर प्रयोग करते रहें। गाँधी के लिए भुख हड़ताल और अनशन आत्मशुद्धि का जरिया है और बावनदास के लिए भी। बावन दास चंदे के पैसे से दो आने की जिलेबी खा लेने पर मुँह में अंगुली डाल कर कै करता है। उसके लिए उपवास आत्मशोधन है। जिला स्तर पर यह बावनदास कांगेसियों के बीच उसी तरह अलग थलग पड़ गया था जिस तरह राष्ट्रीय स्तर पर गाँधी जी कांग्रेसियों के बीच अलग-थल पड़ गए थे बावनदास की कांग्रेसी तस्कर द्वारा हत्या गाँधी की ही शारीरिक वैचारिक हत्या है। यह संकेत है इस बात का कि आजाद भारत में गाँधीवादी भावनाएँ सिर घुनेंगी।

तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद के द्वारा किए गए भूमि दान को हृदय परिवर्तन समझना भूल है। विश्वनाथ प्रसाद तो अपनी बेटी के अवैध संतान पर वैधता की मुहर लगाने के लिए ग्रामीण जनता की सहानुभूति अपने पक्ष में करना चाहता है। वे जमींदारी उन्मुलन कानून से परीचित है इसलिए वे किसानों की छीनी गयी जमीन को उन्हें लौटा कर मुफ्त का यश लुटना चाहते हैं। यह शुद्ध रूप से एक सर्वजनिक हवाई उत्कोच (घूंस) है। यदि सब फुक समझ कर भी मेरीगंज की जनता तहसीलदार साहब का जयजयकार करती है तो यह उस जनता के जटिल संश्टिष्ट मनोविज्ञान का एक पहलु है। तहसीलदार साहब प्रत्याशित भूमि हदबंदी कानुन से बेखबर नहीं हैं। इसलिए वे अपनी बेटी की संतान होने की खुशी एवं उसके प्रेमी के लौटने के अवसर का लाभ उठाकर उन लोगों को जमीन लौटा देते हैं जिन्हें कभी उन्होंने हड़पी थी। वे किसी और को जमीन नहीं देते। उनके इस जमीन बालों को जमीन लौटाने की प्रक्रिया को भूदान या सर्वोदयी हृदय परिवर्तन भी नहीं कहा जा सकता। स्वयं रेणु ने विश्वनाथ प्रसाद का धूर्तता के संकेत कई अवसरों पर दिए हैं।

उपन्यास का चलित्तर कर्मकार कई साम्यवादी संगठनों से होकर गुजरता है उनके भीतर झांक कर देखता है और यह अनुभव करता है कि उन संगठनों का मध्यवर्गीय बुर्जुआ नेतृत्व जनता

का भला नहीं कर सकता है। इसलिए वह बम बंदुकों की राजनीति कर रास्ता अपनाता है। यह चरित्तर कर्मकार पूर्णिया जिले के नक्षत्रमालाकार का साहित्यिक नाम है। रेणु नक्षत्रमालाकार के कभी मित्र रहें तो कभी विरोधी। वे कभी उसकी बंदुक वाली राजनीति से प्रभावित थे। रेणु एक ओर अहिंसक समाजवादी राजनीति से जुड़े हुए थे और दूसरी ओर बंब बन्दुकों वाली राजनीति भी उन्हें आकर्शित करती थी। यह उनके अपने जीवन दर्शन का अन्र्तविरोध था जो इस उपन्यास में बावनदास और चलित्तर कर्मकार के रूप में उभरा है। क्या माना जाए कि रेणु का जीवन दर्शन बावन दास और चलित्तर कर्मकार का योगफल है या दोनों के बीच की राह।

रेणु की यह खुबी है कि उपन्यास के किसी एक पात्र को अपने जीवन दर्शन के प्रतिनिधि के रूप में नहीं उभारतें। आम तौर पर हिन्दी में जो राजनैतिक उपन्यास लिखे जाते रहे हैं उनमें जीवन की विविधता एवं व्यापक संवेदनशीलता के स्थान पर बौद्धिक राजनैतिक शब्दजाल मात्र मिलता है। वहाँ बहुरूपी या परस्पर विरोधी जीवन तत्वों से निर्मित इंसानों की जगह विचार था। भारतीय के कठपुतले मिलते हैं। उनके बिल्कुल विपरित मैला आँचल में सजीव इंसानों की श्रृष्टि हुयी है। यहाँ राजनीति आयी है लेकिन पृष्ठभूमि के रूप में यह पात्रों को अलग-अलग व्यक्तित्व को उभारती है। यह चारों ओर से पात्रों को घेर कर गला नहीं घोटती मैला आँचल में रेणु जी विभिन्न राजनैतिक पार्टियों विचारधाराओं संगठनों का यथास्थान चित्रण करते हैं। यह भी दिखाते हैं कि विचारधारा और मतवादों से आंचलिक जीवन प्रभावित भी होते हैं लेकिन उन विचारधाराओं में से किसी एक विचारधारा को वे अपने जीवनबोध और सौंदर्यबोध पर हावी नहीं होने देते और इसी कारण उनके उपन्यास में जिंदगी की प्रामाणिकता और सजीवता सुरक्षित रहती है।